आध्यात्मिक विभूति

भाई हनुमानप्रसाद पोद्दार

लेखक-
शिवकुमार गोयल

हुए विदेशी हम स्वदेश में, कर सारा निजस्व बलिदान।
करते अन्ध 'परानुकरण' तज भारतीय संस्कृति-अभिमान॥
इसीलिए हम पतन-गर्त में गिरे जा रहे कर अभिमान।
पता नहीं अब कहां रुकेंगे, कब सुबुद्धि देंगे भगवान॥
-भाईजी

प्रकाशक :

अग्रोहा विकास ट्रस्ट

अग्रोहा (हरियाणा)-१२५०४७

प्रकाशक :
अग्रोहा विकास ट्रस्ट
अग्रोहाधाम
अग्रोहा (हरियाणा)-१२५०४७

प्रथम संस्करण-१९९६

मूल्यः १० रुपए

मुद्रक : **पूनम प्रिंट्स**
दिल्ली-३५

अनुक्रमणिका

क्रम-विषय	पृष्ठ
१. हनुमान जी ने रक्षा की	५
२. क्रांतिकारी गतिविधियों में सक्रिय	६
३. खतरनाक राजद्रोही घोषित	८
४. नजरबन्दी के दौरान साधना	९
५. मरीजों की सेवा का आदर्श	९
६. विदेशी वस्त्रों का त्याग	१०
७. जयदयाल गोयदन्का जी से प्रेरणा	११
८. गीता प्रेस की स्थापना	१२
९. गांधीजी का आशीर्वाद	१३
१०. भगवान श्रीराम के दर्शन	१६
११. नेहरुजी के लिए कार दी	१७
१२. 'भारत रत्न' उपाधि ठुकराई	१८
१३. उच्चकोटि के लेखक	१९
१४. साहित्य का उद्देश्य	२०
१५. भक्त हृदय कवि	२०
१६. भगवन्नाम संकीर्तन का महत्व	२२
१७. मालवीयजी की प्रेरणा	२४
१८. पारसी प्रेत की मुक्ति कराई	२५
१९. नोआखाली के पीड़ितों की सहायता	२६
२०. ईश्वरीय चमत्कार की एक अनुभूति	२७
२१. गोरक्षा आन्दोलन में योगदान	२८
२२. श्रीकृष्ण जन्मभूमि का उद्धार	२९
२३. अग्रवाल समाज के प्रेरक	३०
२४. ईश्वर ने रक्षा की	३१
२५. रेल में पत्थर से रक्षा	
२६. कष्ट में भी भगवान की अनुभूति	३३
२७. श्री भाईजी का साहित्य	३५
२८. भाईजी के अमृत वचन	४०

दो शब्द

पर्याप्त समय से यह अनुभव किया जा रहा था कि अग्रवाल समाज के जिन महापुरुषों ने सामाजिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, शैक्षणिक एवं राजनैतिक क्षेत्रों में सक्रिय भूमिका निभाई तथा जन-आन्दोलनों में नेतृत्व प्रदान किया था उन महापुरुषों को समाज भूलता जा रहा है।

'अग्रोहा विकास ट्रस्ट' की प्रचार-प्रसार समिति ने इस प्रश्न पर गम्भीरता से विचार किया और इस नतीजे पर पहुंची कि जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में जिन बन्धुओं ने आगे बढ़कर काम करते हुए महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है, उनके सम्बन्ध में पुस्तकें प्रकाशित की जाएं।

'अग्र-विभूति परिचय-माला' के अन्तर्गत लाला लाजपतराय, डा. राममनोहर लोहिया, श्री देशबन्धु गुप्त, श्री शिवप्रसाद गुप्त, श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार, सेठ जमनालाल बजाज एवं डा. भगवानदास की जीवनियां प्रकाशित करने का निर्णय लिया गया है।

इस परिचय माला के अन्तर्गत शेर-ए-पंजाब लाला लाजपतराय के बाद अब प्रख्यात आध्यात्मिक विभूति गीता प्रेस (गोरखपुर) तथा 'कल्याण' के संस्थापक 'भाई' श्री हनुमानप्रसाद जी पोद्दार की जीवनी प्रकाशित करते हुए हमें अपार गर्व का अनुभव हो रहा है। इसके लेखक जाने-माने साहित्य-सेवी तथा पत्रकार शिवकुमार गोयल (पिलखुवा निवासी) हैं। आशा है पाठक पूज्य भाई जी के जीवन से धर्म, संस्कृति, राष्ट्र तथा समाज सेवा की प्रेरणा लेंगे।

बालेश्वर अग्रवाल

(बालेश्वर अग्रवाल)
महामंत्री
अग्रोहा विकास ट्रस्ट

नई दिल्ली
१५ अगस्त १९९६

श्रद्धेय 'भाई जी' श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार इस युग की एक दिव्य विभूति थे। धार्मिक और नैतिक मूल्यों के प्रचार-प्रसार का जितना ठोस कार्य 'गीता प्रेस' (गोरखपुर) तथा मासिक 'कल्याण' के माध्यम से भाई जी ने किया, उतना कार्य दर्जनों संस्थायें भी मिल कर नहीं कर सकतीं। पुराणों, उपनिषदों, महाभारत, रामायण तथा विशेषकर गीता के प्रचार-प्रसार का एकमात्र श्रेय यदि किसी को है, तो वह भाई जी को है। 'श्रीमद्भगवद्गीता' जैसे लोक कल्याणकारी ग्रन्थ को घर-घर में सुलभ कराने का कार्य भाई जी ने ही किया। इसीलिये राष्ट्रकवि डॉ. रामधारीसिंह 'दिनकर' ने भाई जी के लिये 'श्रीकृष्ण-दूत' शब्द का प्रयोग किया है।

श्री भाई जी का जन्म राजस्थान के रतनगढ़ नगर में लाला भीमराज अग्रवाल के घर आश्विन शुक्ल १२, वि. सं. १९४९ (१७ सितम्बर, १८९२) को हुआ था। उनके पिता लाला भीमराज तथा माता श्रीमती रिखीबाई हनुमान जी के अनन्य भक्त थे। अतः उन्होंने अपने नवजात बालक का नाम 'हनुमान प्रसाद' रखा।

हनुमान प्रसाद के दादा-दादी, माता-पिता सभी परम भक्त तथा धार्मिक प्रवृत्ति के थे। अतः बचपन से ही उन्होंने बालक 'हनुमान' को रामायण, गीता तथा श्रीमद्भागवत की कथाएं सुनानी शुरू कर दी थीं।

माता रिखी बाई अचानक बालक को दो वर्ष का छोड़ कर स्वर्ग सिधार गईं, तो बालक का लालन-पालन दादी श्रीमती रामकौर बाई ने किया। रामकौर बाई भी अत्यन्त धार्मिक महिला थीं। उन्होंने अपने पोते को 'हनुमान कवच' का पाठ सिखाया। निम्बार्क सम्प्रदाय के संत श्री ब्रजदास जी से बालक को दीक्षा दिलाई गई। उस जमाने के सिद्ध संत श्री बखनाथ जी की दादी रामकौर पर बहुत कृपा थी। संत बखन्नाथ जी ने बालक हनुमान को गीता के श्लोक कंठस्थ करने की प्रेरणा दी। हनुमान ने केवल एक वर्ष में पूरी गीता कंठस्थ कर डाली। उस समय बाबा बखन्नाथ जी ने भविष्यवाणी की थी कि यह बालक आगे चलकर गीता तथा रामायण का अनन्य प्रचारक बनेगा।

हनुमान जी ने रक्षा की

हनुमान प्रसाद केवल चार वर्ष के थे तभी एक दिन अचानक आसाम में आए भूकम्प से ध्वस्त हुए मकान के मलबे में दब गए थे। उस समय उन्हें भगवान श्री हनुमान जी की कृपा से चमत्कारी ढंगसे जीवन-दान मिला था। 'कल्याण' के ईश्वरांक में उन्होंने उस समय की घटना का वर्णन करते हुए लिखा था-

''सन् १८९६ ई० (सं० १९५३ वि०) में आसाम में भयानक भूकम्प आया था। उस

समय मेरी उम्र लगभग चार वर्ष की थी। शिलांग (आसाम) में हमारा कारोबार था। मेरे दादाजी कनीरामजी वहाँ रहते थे। पिताजी कलकत्ता का कारोबार सँभालते थे। माताजी की बहुत छोटी उम्र में मृत्यु हो जाने से मेरी दादीजी ने मुझे पाला। उनका मुझपर जो स्नेह था एवं उन्होंने मेरे लिये जितने कष्ट सहे, उसका बदला मैं हजार जन्म सेवा करके भी नहीं चुका सकता। उनके जीवित रहते मैंने इस ओर पूरा ध्यान नहीं दिया। अब पछताने से कोई लाभ नहीं। जिनके माता-पिता आदि जीते हैं, उन्हें बड़ा सौभाग्य प्राप्त है। वे जीभर उनकी सेवा करके आनन्द लूट लें, नहीं तो पीछे मेरी तरह पश्चत्ताप के सिवा प्रत्यक्ष सेवा का और कोई साधन नहीं रहेगा। अस्तु मैं दादीजी के साथ शिलांग में रहता था। मेरी बुआ भी वहीं आयी हुई थी। उनके दो सन्तान थीं। हम तीनों साथ-साथ खेला करते। भूकम्प के दिन हमारे निकटवर्ती श्री भजनलाल श्रीनिवास के यहाँ किसी व्रत का उद्यापन था। उनके यहाँ हमें भोजन करने जाना था। बुआजी के दोनों बालकों ने जाने से इंकार कर दिया। मैं अकेला ही गया। वे घर पर रह गये। सन्ध्या का समय था। लगभग पाँच बजे होंगे। मैंने श्री भजनलाल श्री निवास के गोले के पीछे रसोई में जाकर भोजन किया। रसोई से निकलकर गोले में घुस ही रहा था कि धरती बड़े जोर से काँप उठी। मैं चिल्लाया, मेरे आस-पास पत्थरों की वर्षा होने लगी। सारा मकान मिनटों में ही ध्वस्त हो गया। मैं दब गया, परन्तु आश्चर्य, मेरे चारों ओर पत्थर हैं, उन पर एक तख्ता आ गया और उसके ऊपर पत्थरों का पहाड़। मैं मानो खोह में-काली गुफा में घिर गया। पता नहीं,वायु के आने-जाने का रास्ता कैसे रहा, परन्तु मैं मरा नहीं। भूकम्प बन्द होने पर मूसलाधार वर्षा हुई और उसी समय हमारे बगल के एक गोले में आग लग गई। चारों ओर हाहाकार मचा था। कौन दबा, कौन बचा, कुछ पता नहीं। दादाजी हम तीनों बालकों की खोज में लगे। मेरी बुआजी के दोनों बालक हमारे ध्वस्त हुए घर के पत्थरों के नीचे मरे मिले। मेरी बड़ी बुआजी के पौत्र मुझसे कुछ बड़ी उम्र के श्रीराम गोयनका की भी लाश मिली, ढूँढ़ते और पुकारते दादाजी भजनलाल श्रीनिवास के गोले के पास आये। वे बड़े जोर से पुकार रहे थे 'मन्नू'। उन दिनों मुझे 'मन्नू' नाम से सम्बोधित किया जाता था। मैंने आवाज सुन ली। नन्हा सा बालक था। भयभीत था, रो रहा था। परन्तु न मालूम किस प्रेरणा से मैंने शक्ति भर जोर से उत्तर दिया- ''यहाँ हूँ, जल्दी निकालिए।'' पत्थरों का ढेर हटाया गया। मैं तुरन्त निकलकर दादाजी की गोद में चढ़ गया। उन्होंने मुझे हृदय से लगा लिया। दोनों रोने लगे। दादीजी तब तक अपने इष्ट श्री हनुमानजी को याद कर रही थीं और हनुमान जी ने उनकी पुकार सुन ली थी।'

क्रान्तिकारी गतिविधियों में सक्रिय

भाई जी ने अपना बालकपन धार्मिक संस्कारों के साथ शुरू किया, तो युवावस्था वे कलकत्ता में आजादी के दीवाने क्रांतिकारियों को समर्पित कर बैठे। गीता के प्रति अनन्य

निष्ठा ने ही उन्हें विदेशी-विधर्मी ब्रिटिश सरकार की गुलामी के विरुद्ध विद्रोह के लिये प्रेरित किया। कलकत्ता में रहते हुये वे रासबिहारी बोस तथा विपिनचन्द्र पाल के कार्यों तथा विचारों से प्रभावित हुये। लोकमान्य तिलक तथा महर्षि अरविन्द के लेखों ने भी उन्हें प्रभावित किया। वे कलकत्ता में प्राय: बंगाली युवा क्रांतिकारियों की गुप्त बैठकों में शामिल होने लगे। इसी बीच कलकत्ता की साहित्य संवर्द्धनी समिति की ओर से भाई जी ने 'गीता' का प्रकाशन कराया। जिसके मुख पृष्ठ पर भारत माता का ऐसा चित्र दिया गया था, जिसमें वे हाथ में खड्ग लिये खड़ी थीं। कलकत्ता के प्रशासन ने गीता के इस संस्करण को भड़काने वाला करार देकर जब्त कर लिया था।

कलकत्ता में पोद्दार जी श्री अरविन्द घोष, यतीन्द्रनाथ दास, देशबंधु चितरंजन दास, 'माडर्न रिव्यू' के संपादक रामानन्द चटर्जी, प्रख्यात पत्रकार बाबू बालमुकुंद गुप्त, लक्ष्मी नारायण गर्दे, पं. झाबरमल शर्मा, साहित्यकार अमृतलाल चक्रवर्ती, राधा मोहन गोकुल जी जैसी विभूतियों के निकट संपर्क में आये। लोकमान्य तिलक और गोपाल कृष्ण गोखले कलकत्ता आये, तो भाई जी उनके संपर्क में आये। बाद में वे महात्मा गांधी के संपर्क में आये तथा उनके पारिवारिक संबंध बन गये थे।

भाई जी को वीर सावरकर के '१८५७ का स्वातन्त्र्य समर' ग्रंथ ने भी बहुत प्रभावित किया था। वे १९३८ में वीर सावरकर जी के दर्शनों के लिये मुम्बई गये थे।

भाई जी ने कपड़े में गाय की चर्बी लगाये जाने का पता चलते ही सन् १९०६ में विदेशी कपड़े तथा विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार का निर्णय ले लिया था। उन्होंने युवावस्था में ही खादी तथा स्वदेशी वस्तुएं प्रयोग करनी शुरू कर दी थीं।

कलकत्ता में व्यापार करते समय भाई जी वैश्य सभा, अग्रवाल महासभा, हिन्दी साहित्य परिषद, मारवाड़ी सहायक समिति तथा हिन्दू महासभा आदि संस्थाओं को सक्रिय सहयोग देने लगे थे।

संवत् १९७१ में महामना पं. मदनमोहन मालवीय जी महाराज हिन्दू विश्वविद्यालय (काशी) के लिए धन संग्रह के उद्देश्य से कलकत्ता पधारे तो भाई जी ने अनेक लोगों से मिलकर उन्हें दान-राशि दिलाई थी। कलकत्ता हिन्दू महासभा के मंत्री के रूप में भाई जी ने महामना का सार्वजनिक अभिनन्दन किया था।

कलकत्ता में वे क्रांतिकारियों की गुप्त बैठकों में भाग लेने लगे थे। कुछ क्रांतिकारी जब पुलिस की गिरफ्त में आ गये तो भाई जी ने उनकी अदालती पैरवी में भी योगदान किया। इसी कारण उनका नाम खुफिया पुलिस की डायरी में अंकित कर लिया गया था।

'खतरनाक राजद्रोही' घोषित

सन् १९१४ की बात है। २६ अगस्त को कलकत्ता बंदरगाह के कार्यालय से 'आर. बी. रोडा एण्ड कम्पनी' का एक कर्मचारी श्रीशचन्द एक पार्सल छुड़ाकर उसकी दस पेटियां बैलगाड़ी में लदवाकर रवाना हुआ। कंपनी कार्यालय तक पहुँचने से पहले ही बैलगाड़ी रास्ते से गायब हो गई। बैलगाड़ी पर लदी पेटियों में ४६ हजार कारतूस तथा ५० पिस्तौलें थीं। रोडा एण्ड कम्पनी ने इन्हें जर्मनी से मंगवाया था।

कारतूस और पिस्तौलों से भरी पेटियां गायब हो जाने का समाचार फैलते ही कलकत्ता में सनसनी फैल गयी। इन्हें गायब कराने की योजना कलकत्ता में सक्रिय क्रांतिकारियों ने बनायी थी। रोडा एण्ड कम्पनी का कर्मचारी श्रीशचन्द स्वयं क्रांतिकारी समिति का सदस्य था।

क्रांतिकारियों ने पेटियां गुप्त अड्डे पर ले जाकर पचास पिस्तौल तो अपने सदस्यों को वितरित कर डाले-किन्तु कारतूस छिपाने की समस्या सामने आयी। बाबूराव विष्णु पराडकर (प्रख्यात पत्रकार), घनश्यामदास बिरला, प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका, आशुतोष लाहिड़ी, हनुमानप्रसाद पोद्दार, ओंकारमल सर्राफ तथा ज्वालाप्रसाद कानोड़िया उन दिनों कलकत्ता में क्रांतिकारियों के गुप्त अड्डों पर सक्रिय रहते थे।

प्रभुदयाल हिम्मतसिंहका ने कुछ कारतूस हनुमानप्रसाद पोद्दार की बिरला ब्राफ एण्ड कंपनी की गद्दी (व्यापार के काम आने वाला ठिकाना) पर चुपचाप पहुँचा दिये। पराडकर जी ने भी लगभग एक हजार कारतूस अपने एक परिचित के यहां छिपवा दिये।

कलकत्ता की सी. आई. डी. पुलिस ने एक बंगाली युवक को मुखबिर बनाने में सफलता प्राप्त कर ली। उसने पुलिस को बता दिया कि कुछ कारतूस क्लाइव स्ट्रीट स्थित पोद्दार जी की बिरला ब्राफ एण्ड कम्पनी की गद्दी पर पहुंचाये गये थे।

१६ जुलाई १९१६ को पुलिस के एक दल ने इस कंपनी पर छापा मारा तथा हनुमान प्रसाद पोद्दार, ज्वालाप्रसाद कानोडिया, ओंकारमल सर्राफ और फूलचन्द चौधरी को 'राजद्रोह' के आरोप में गिरफ्तार कर लिया। चारों को कलकत्ता के डुरान्डा हाउस स्थित कारागार में बंद कर दिया गया।

कलकत्ता का मारवाड़ी समाज इन चारों मारवाड़ी युवकों की गिरफ्तारी से क्षुब्ध हो उठा। किन्तु उन दिनों अंग्रेजी शासन का इतना आतंक था कि किसी ने भी गिरफ्तारी के विरोध का साहस नहीं किया। कुछ अंग्रेज-भक्त मारवाड़ियों ने तो प्रस्ताव पास कर इन चारों क्रांतिकारी युवकों को समाज का कलंक तक घोषित कर दिया।

डुरान्डा हाउस जेल से ले जाकर चारों को अलीपुर जेल में बंद कर दिया गया। सरकार ने इन्हें अत्यन्त खतरनाक, 'षड्यंत्रकारी' तथा 'राजद्रोही' घोषित किया हुआ था। इसलिये जेल में अलग-अलग कोठरियों में रखा गया।

प्रख्यात पत्रकार पंडित झाबरमल शर्मा उन दिनों कलकत्ता रहते थे। उन्होंने इन सबको जेल में भोजन आदि भिजवाने की व्यवस्था की।

पोद्दार जी शुरू से ही ईश्वर भक्त थे। जेल की एकान्त कोठरी में उन्होंने भगवन्नाम जप शुरू कर दिया। पूरे एक माह तक अलीपुर जेल में बंद रखने के बाद अगस्त १९१६ में 'भारत रक्षा विधान' के अंतर्गत उन्हें अलीपुर जेल से शिमलापाल (जिला बांकुड़ा) ले जाकर नजरबंद कर दिया गया।

नजरबन्दी के दौरान साधना

नजरबन्दी के दौरान भाईजी के जीवन में अनोखा परिवर्तन होता चला गया। उन्होंने वहाँ के एकान्त जीवन का 'साधना' के लिए लाभ उठाया। वे सवेरे ब्रह्ममुहुर्त में तीन बजे उठ जाते। 'हरे राम' षोडश मंत्र का तीस माला जाप करने के बाद शौच-स्नान से निवृत्त होते। स्नान तथा संध्या-वन्दन के बाद 'श्री विष्णु सहस्त्र नाम' का पाठ करते। इसके बाद 'ध्रुव-नारायण' की आकृति का ध्यान करते। उन्हें चौबीस घण्टों में से नौ-नौ घण्टे तक अखण्ड साधना करने का अभ्यास हो गया था। उन्हें साधना का इतना अभ्यास हो गया था कि अपने हृदय-पटल पर साक्षात भगवान विष्णु की मनोहारी मूर्ति विराजमान दिखायी पड़ने लगती थी।

मरीजों की सेवा का आदर्श

भाईजी ने शिमलापाल में साधना तथा शास्त्रों के अध्ययन के साथ-साथ मरीजों की सेवा का कार्य भी शुरु कर दिया। सरकार की ओर से एक चिकित्सक मरीजों की जाँच करने आते थे। उनके मार्गदर्शन में भाईजी ने होम्योपैथिक औषधियों का ज्ञान प्राप्त किया तथा बाहर से कुछ औषधियाँ तथा पुस्तकें मंगवा लीं। उन्होंने वहाँ के ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले रोगियों को औषधियाँ देने तथा उनकी सेवा करने का कार्य शुरु कर दिया।

शिमलापाल में नजरबन्दी की २१ माह की अवधि में उन्होंने हजारों व्यक्तियों को रोग मुक्त किया। उनकी सेवा की, साथ-साथ उन्हें भगवन्नाम जाप, संकीर्तन तथा गीता,रामायण के अध्ययन की प्रेरणा देकर उनके कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया। २१ माह तक नजरबन्द रहने के बाद जब उन्हें बंगाल छोड़ने का आदेश मिला तो इसका पता लगते ही सैकड़ों ग्रामीणों ने उन्हें अश्रुपूर्ण नेत्रों से विदाई दी। ग्रामीण हृदय से उन्हें अपना प्रेरणा स्रोत तथा 'मुक्तिदाता' मानने लगे थे। भाईजी ने उन लोगों पर सेवा तथा सद्मार्ग की प्रेरणा के माध्यम से अपनी अमिट छाप छोड़ी थी।

नजरबंदी के दौरान ही भाई जी ने नारद भक्ति सूत्रों की व्याख्या की।

नजरबंदी से मुक्त होने के कुछ दिन बाद रतनगढ़ (राजस्थान) में रहने के दौरान भाई जी को सेठ जमनालाल बजाज ने मुम्बई बुला लिया। मुम्बई में निवास के दौरान भाई

जी समाज सुधार के कार्यों में भी सक्रिय रहे। उन दिनों जब एक वृद्ध रईस ने १६ वर्षीय एक कन्या से विवाह रचाने की तैयारी की, तो भाई जी ने उसे चुनौती दी तथा तब तक चैन नहीं लिया, जब तक वह अनमेल विवाह रुक नहीं गया। इसके लिये उन्हें सत्याग्रह से लेकर अदालत तक का सहारा लेना पड़ा था।

मुम्बई में ही भाई जी महात्मा गांधी, वीर सावरकर, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, महादेव देसाई, कृष्णदास जाजू जैसी विभूतियों के संपर्क में आये। इन सभी विभूतियों से उनका स्नेह संबंध बना रहा।

विदेशी वस्त्रों का त्याग

युवा हनुमानप्रसाद जी बालपन से ही धार्मिक संस्कारों में पले थे। अत: धर्म के प्रति उनके हृदय में अनन्य श्रद्धा-भक्ति थी। कलकत्ता की एक कपड़ा मिल में काम करने वाले एक मारवाड़ी ने एक दिन जब उन्हें बताया कि विदेशी तकनीक से बनने वाले कपड़े में मांड देने के लिये गाय-बैलों की चर्बी का प्रयोग होता है, तो उन्होंने विदेशी वस्त्रों का प्रयोग बंद करने का संकल्प ले लिया। एक दिन तो उन्होंने विदेशी वस्त्रों को इकट्ठे करके उन्हें जला ही डाला।

भाई जी की दादी रामकौर ने गांधीजी के समय अपने तमाम विदेशी वस्त्र 'होली' में जलाने के लिए प्रस्तुत कर दिए थे। भाईजी को पता था कि उनकी पत्नी के पास अभी कुछ विदेशी कपड़े की साड़ियाँ बची हैं। उन्होंने धर्मपत्नी रामदेई को प्रेरित किया कि आज से हमारे घर में स्वदेशी वस्त्र के अलावा एक भी विदशी कपड़ा नहीं रहना चाहिए। धर्मपत्नी ने अपनी तमाम साड़ियाँ लाकर सामने रख दीं। भाई जी ने उन्हें आग की भेंट चढ़ा डाला।

भाई जी ने स्वदेशी वस्तुओं के प्रचार के उद्देश्य से श्री नागरमल मोदी के सहयोग से 'स्वदेशी वस्तु-भंडार' की स्थापना की थी। उन्होंने श्री जमनालाल बजाज के साथ बीकानेर के महाराजा से भेंट कर उन्हें खादी के प्रचार की प्रेरणा दी थी।

भाई जी ने बम्बई में अग्रवाल युवकों को साथ लेकर 'मारवाड़ी खादी प्रचार मंडल' की स्थापना की। उन्होंने 'खादी और परमार्थ' निबन्ध लिखकर उसके माध्यम से खादी का प्रचार किया।

भाई जी ने खादी के महत्व पर प्रकाश डालते हुए इसमें लिखा था:-

'खादी इस समय राजनैतिक आन्दोलन में शामिल है, पर वास्तव में यह केवल राजनैतिक ही नहीं है, इसका सम्बन्ध तो सदाचार, वैराग्य और ईश्वर भक्ति से विशेष है। राजनैतिक दृष्टि से नहीं, मैं तो अपने विश्वास के अनुसार शुद्ध खादी पहनने का अनुरोध 'कल्याण' के सभी पाठक-पाठिकाओं से प्रेमपूर्वक करता हूं।

इस समय देश में ऐसा कोई वस्त्र नहीं है, जो ज्यादा पवित्र हो या जिसमें हिंसा न होती हो। विलायती और मिल के कपड़ों में चर्बी लगती है, जिसमें अपवित्रता और हिंसा

दोनों ही सम्मिलित हैं। रेशमी वस्त्रों को प्राचीनकाल में शुद्ध मानते थे। पर अब तो रेशम के धागे बनाने में असंख्य जीव उबलते हुए जल में डाले जाते हैं। इससे रेशम भी अपवित्र और हिंसामय है। ऊनी कपड़े इस देश में हमेशा लोग नहीं पहन सकते, परन्तु खादी उपर्युक्त दोनों की अपेक्षा पवित्र और हिंसा रहित है। पवित्रता का असर मन पर होता है, जिससे भगवान् में मन लगता है। खादी पहनते ही सादगी आ जाती है। शौकीनी छूटते ही अनेक दोष आप ही चले जाते हैं। कपड़े का खर्च कम हो जाता है। इसके सिवा खादी में सबसे बड़ी बात है गरीबों, भूखों की सेवा और देश की संस्कृति का सम्मान। आज करोड़ों स्त्री-पुरुष कार्य के अभाव से अन्न-वस्त्र नहीं पाते। देश खादी पहनने लगे तो कातने, बुनने आदि कामों में लगकर करोड़ों भाई-बहन सुखी हो सकते हैं। इस प्रकार खादी में पवित्रता, अहिंसा, सादगी, स्वावलम्बन, सदाचार, वैराग्य, दान और भगवान् की पूजा रूप परमार्थ भरा है। अतएव सभी भाई बहनों को खादी जरूर पहननी चाहिए।'

उन्होंने उसी दिन से अपने देश के करघे पर बनी खादी पहनने का संकल्प ले लिया। इस संकल्प का उन्होंने न केवल स्वयं पालन किया, अपितु वे स्वदेशी के आजीवन प्रचारक भी बने रहे। युवावस्था में ही वे 'स्वदेशी' के प्रचार तथा कुरीतियों के विरोध में जन-जागरण के कार्य में जुट गये।

जयदयाल गोयन्दका जी से प्रेरणा ली

मुम्बई में ही उन दिनों प्रसिद्ध संगीताचार्य विष्णु दिगम्बर की धूम थी। उनके सत्संग में आकर भाई जी के हृदय में संगीत तथा काव्य की धारा फूट निकली। भाई जी ने भक्ति के कुछ भजन लिखे जो 'पत्र-पुष्प' के नाम से प्रकाशित हुए। संगीताचार्य विष्णु दिगम्बर जी ने 'पत्र-पुष्प' के भजनों को पढ़कर उन्हें आशीर्वाद दिया था- ''आप भगवद्हृदय कवि ही नहीं बनेंगे, आपके हृदय में निरंतर भक्ति भागीरथी प्रवाहित होती रहेगी।''

मुम्बई में उनके मौसेरे भाई जयदयाल गोयन्दका का धार्मिक क्षेत्र में बहुत प्रभाव था। सेठ जयदयाल जी ने अपने जीवन का लक्ष्य 'श्रीमद्भगवद्गीता' का प्रचार-प्रसार बनाया हुआ था। भाई जी गोयन्दका जी से बहुत प्रभावित हुये तथा उन्हें अपना मार्गदर्शक मानने लगे।

जयदयाल गोयन्दका, भगवान् श्रीकृष्ण के मुखारविंद से निकला गीता का पाठ और अध्ययन करते हुये, जब भी अठारहवें अध्याय के उनहत्तर-सत्तर श्लोक पर पहुंचते, तो उनके मन में प्रेरणायें उभरने लगतीं। इन श्लोकों में कहा गया है-जो पुरुष इस रहस्य युक्त गीता शास्त्र का मेरे भक्तों में प्रचार करेगा, उससे बढ़कर मेरा प्रिय कार्य करने वाला मनुष्यों में कोई है, और न कोई होगा'। इन श्लोकों पर मनन करते हुये इनके मन में प्रेरणा उभरती कि इन श्लोकों को जीवन में भी उतारा जाये। भाव घनीभूत होता गया और सेठजी घूम-

घूम कर गीता का प्रचार करने लगे। वे गीता के श्लोकों की व्याख्या करते, उनका म[र्म]
समझाते और अपने अनुभव सुनाते।

गीता का प्रचार करते हुये उन्होंने अनुभव किया कि इस शास्त्र के शुद्ध पाठ औ[र]
सरल अर्थ का अभाव है। जो प्रतियां उपलब्ध हैं, उनमें बहुतेरी गलतियां हैं और अनुवा[द]

अग्रवाल समाज की दो महान विभूतियां- भाईजी तथा सेठ जयदयाल गोयन्दका

भी प्राय: सही नहीं हैं। उन्होंने निश्चय किया कि वे स्वयं ही इस अभाव की पूर्ति करेंगे। इसके लिये उन्होंने गीता पर अपने भावों के अनुसार एक टीका लिखी और कलकत्ता के वणिक प्रेस में छपवाई। पहला संस्करण पांच हजार प्रतियों का छपा। जब पुस्तक छपकर आ गई, तो सेठजी को बड़ी खिन्नता हुई। बहुत सावधानी रखने पर भी पुस्तक में कई अशुद्धियां थीं, इन अशुद्धियों को हाथ से ठीक किया गया। निश्चय हुआ कि अगले संस्करण में और ज्यादा सावधानी बरतेंगे, लेकिन अगला संस्करण भी सर्वथा शुद्ध नहीं निकल सका। तब उन्होंने सोचा कि जब तक अपना प्रेस नहीं होगा और धार्मिक ग्रंथों के प्रकाशन के लिये अलग से प्रयत्न नहीं होगा, तब तक शुद्ध मुद्रण की आशा नहीं की जा सकती। बस यहीं से 'गीता प्रेस' की स्थापना का आधार बना।

'गीता प्रेस' की स्थापना

गोयन्दका जी का व्यापार तब बांकुड़ा (बंगाल) में था, लेकिन गीता प्रचार के सिलसिले में वे प्राय: बाहर रहते थे। समस्या यह थी कि प्रेस कहां लगाया जाये।

उनके मित्र घनश्यामदास जालान-गोरखपुर में व्यापार करते थे। उन्होंने सुझाव दिया कि यदि वे गोरखपुर में प्रेस लगायें, तो वे भी कार्य में सहयोगी बन सकते हैं। मई १९२२

में गोरखपुर में प्रेस की स्थापना हुई और उसका नाम 'गीता प्रेस' रखा गया। गीता प्रेस ने शुरू में केवल गीता के विभिन्न आकारों के संस्करणों का ही मुद्रण किया।

भाई जी कलकत्ता में क्रांतिकारी गतिविधियों में सक्रिय रहने के आरोप में जब शिमिलापाल (बंगाल) में नजरबंद रहे, तो उन्हें भी गीता तथा श्रीमद्भागवत आदि धर्म ग्रंथों के प्रचार की प्रेरणा प्राप्त हुई। छूटने के बाद गोयन्दकाजी और पोद्दार जी की मुम्बई में भेंट हुई, तो पोद्दार जी ने अपने को गीता और धार्मिक ग्रंथों के प्रचार कार्य के लिये उन्हें सहयोगी के रूप में समर्पित कर दिया।

सन् १९२६ में दिल्ली में मारवाड़ी अग्रवाल महासभा का अधिवेशन था। सेठ जमनालाल बजाज अधिवेशन के सभापति थे। सेठ घनश्यामदास बिड़ला भी अधिवेशन में उपस्थित थे। बिड़लाजी भाईजी के गीता प्रचार की लगन और समर्पित भावना से बहुत प्रभावित थे। उन्होंने बातचीत के दौरान कहा, 'हनुमानप्रसाद जी, केवल गीता के प्रचार तक सीमित रहने से आपका उद्देश्य पूरा नहीं होगा। सद्विचारों और सनातनधर्म के प्रचार के लिये एक स्तरीय पत्रिका का प्रकाशन होना चाहिये।' बिड़लाजी के ये वाक्य भाई जी के हृदय में बस गये। वे जब जयदयाल गोयन्दकाजी से मिले, तो उन्हें बिड़लाजी के सुझाव से अवगत कराया। गोयन्दकाजी बोले 'बिड़ला जी का सुझाव बिल्कुल ठीक है।'

गोयन्दकाजी ने कहा धार्मिक पुस्तकों के प्रकाशन के साथ-साथ यदि पत्रिका भी निकालें, तो धर्म का प्रचार तो होगा ही, हमारे द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की प्रेरणा भी लाखों पाठकों तक पहुंचेगी। अब उन्होंने पूछा पत्रिका का क्या नाम होना चाहिये? भाई जी ने तपाक से उत्तर दिया 'कल्याण'-जो मानवमात्र के कल्याण का मार्ग प्रशस्त कर सके'। बस हो गया बीजारोपण 'कल्याण' का।

भाई जी ने मुम्बई पहुंचकर अपने मित्र और धार्मिक पुस्तकों के उस समय के एकमात्र प्रकाशक खेमराज श्रीकृष्णदास, प्रेस के मालिक कृष्णदास जी से 'कल्याण' के प्रकाशन की योजना की चर्चा की, तो उन्होंने सुझाव दिया कि आप सामग्री एकत्रित करें, उसे सुंदर-आकर्षक ढंग से प्रकाशित करने की जिम्मेदारी मैं लेता हूँ। श्रीकृष्णदास जी ने कल्याण पत्रिका का रजिस्ट्रेशन करा दिया। श्रावण कृष्णा ११, संवत् १९८३ (अगस्त १९२५) को 'कल्याण' का प्रवेशांक निकला। प्रकाशन किया था-'सत्संग भवन' ने। प्रथम अंक में ही महात्मा गांधी का भी एक लेख प्रकाशित हुआ था। प्राचीन संतों के प्रेरक विचार तथा धार्मिक कथाएं भी इस अंक में छपी थीं।

गांधी ज़ी का आशीर्वाद

भाई जी सेठ जमनालाल बजाज को साथ लेकर 'कल्याण' के लिये गांधी जी का आशीर्वाद लेने गये, तो उन्होंने सुझाव दिया, 'विज्ञापन के प्रलोभन से बचना और पुस्तकों

की समीक्षा वाला स्तंभ पत्रिका में कभी नहीं देना'। गांधी जी का तर्क था कि यदि विज्ञापन से धन प्राप्ति का लोभ लग गया, तो फिर बहुत सी औषधियों और वस्तुओं के झूठे गुण बखान कर जनता को ठगने वाले विज्ञापन भी देने पड़ेंगे। इस ठगी में एक पत्रिका भागीदार क्यों बने? इसी प्रकार अपनी पुस्तकों की समीक्षा के आकांक्षी लोग केवल उसकी प्रशंसा को छपवाना चाहेंगे। यदि किसी पुस्तक की विषय सामग्री की आलोचना कर दी गई, तो वे विरोधी बन जायेंगे। इसलिये इन दोनों से बचना चाहिये। भाई जी को गांधी जी के दोनों सुझाव बहुत पसंद आये और उन्होंने इनका आजीवन पालन किया।

'कल्याण' तेरह माह तक बम्बई से प्रकाशित हुआ। इसके बाद अगस्त १९२६ से गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित होने लगा। भाई जी ने देशभर के उच्चकोटि के धर्माचार्यों, संत महात्माओं और लेखकों को पत्र लिखकर, उनसे मिलकर 'कल्याण' के लिये अच्छी से अच्छी सामग्री जुटानी शुरू कर दी। उन्होंने श्रीकृष्ण, श्रीराम, शिव, गणेश, दुर्गा, हनुमान तथा विभिन्न देवी-देवताओं के शास्त्रीय आधार पर रंगीन और आकर्षक चित्र बनवाये और उन्हें 'कल्याण' में देना शुरू किया। इन दुर्लभ चित्रों के कारण भी 'कल्याण' की लोकप्रियता बढ़ने लगी।

'कल्याण' का पहला विशेषांक 'भगवन्नामांक' था। इसके लिये उन्होंने पूरी योजना के साथ तैयारी की। विभिन्न धर्माचार्यों, संत-महात्माओं और विद्वानों से विशेष लेख लिखवाये। महात्मा गांधी से इस विशेषांक के लिये आग्रहपूर्वक लेख लिखवाया। संवत् १९८४ में सुंदर विशेषांक निकला, तो सभी वर्गों ने इसे बहुत पसंद किया। उस समय विशेषांक की ग्यारह हजार प्रतियां प्रकाशित हुई थीं।

भाई जी इस लोक के साथ-साथ परलोक को भी कल्याणकारी बनाने पर बहुत बल देते थे। उनका स्पष्ट मत था कि इस लोक में सद्कार्य करके ही हम अपने परलोक को अच्छा बना पायेंगे। इसी उद्देश्य को लेकर उन्होंने 'परलोक और पुनर्जन्मांक' विशेषांक प्रकाशित किया। इस विशेषांक में पुनर्जन्म पर हुये शोध कार्य की अलौकिक घटनायें, चोरी, लूट, मिलावट, बेईमानी, हत्या जैसे पापों के कारण परलोक में मिलने वाली यातनाओं का पौराणिक आधार पर वर्णन प्रकाशित कर पापों से दूर रहने की प्रेरणा दी गई है।

भाई जी पुरानी पीढ़ी के मिशनरी संपादक थे। 'कल्याण' के प्रकाशन या सम्पादन का उद्देश्य व्यावसायिक न होकर समाज को सद्विचारों से प्रेरित करना था। वे 'कल्याण' के प्रत्येक अंक की सामग्री का स्वयं संपादन करते थे तथा इस बात का विशेष ध्यान रखते थे कि उसमें पूरी तरह प्रामाणिक, तथ्यात्मक, प्रेरक तथा उच्चस्तरीय रचनायें ही प्रकाशित हों। वे दृढ़ सनातनधर्मी थे, किन्तु धार्मिक जगत के प्रत्येक सम्प्रदाय की भावनाओं, परम्पराओं का आदर करते थे। इसलिये 'कल्याण' को वैष्णव, रामानुज, निम्बार्क, माध्व आदि सभी सम्प्रदायों के धर्माचार्यों, श्री शंकराचार्यों, आर्य समाजी विद्वानों, जैन मुनियों आदि की रचनायें सुलभ होती रहीं। धार्मिक समन्वय के भाई जी साक्षात प्रतीक थे।

श्री पोद्दार जी का महान सिद्ध संत श्री उड़िया बाबा, श्री हरिबाबा, आनन्दमयी मां, बंगाल के प्रख्यात संत सीतारामदास ओंकारनाथ महाराज, धर्मसम्राट स्वामी करपात्री जी, शंकराचार्य स्वामी कृष्णबोधाश्रम जी, स्वामी अखण्डानंद सरस्वती, संत प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जैसी धार्मिक विभूतियों से जहां निकट का सम्पर्क रहा, वहीं महामना पंडित मदनमोहन मालवीय जी, राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ के तत्कालीन सरसंघचालक श्री मा. स. गोलवलकर (श्री गुरुजी), राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन, राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद, डॉ. राधाकृष्णन, बाबू श्रीप्रकाश जैसी राष्ट्र विभूतियों के भी वे निकट सम्पर्क में रहे। इन सभी विभूतियों ने समय-समय पर गीता प्रेस (गोरखपुर) पधार कर भाई जी तथा गीता प्रेस द्वारा धार्मिक क्षेत्र में की गई अभूतपूर्व सेवाओं की प्रशंसा की थी।

भाई जी के 'कल्याण' के प्रकाशन के उद्देश्य ने देश के अनेक मूर्धन्य विद्वान पत्रकारों को सहयोग के लिए प्रेरित किया। प्रख्यात पत्रकार पं. लक्ष्मीनारायण गर्दे, पं. चिम्मनलाल गोस्वामी, शान्तनु बिहारी द्विवेदी (जो आगे चलकर महान भागवत मर्मज्ञ स्वामी अखण्डानंद जी के नाम से विख्यात हुए) स्वामी श्री रामसुखदास जी, सुदर्शनसिंह 'चक्र', पं. शिवनाथ दुबे, कृष्णचंद्र अग्रवाल तथा महान विद्वान पंडित जानकीनाथ शर्मा जैसी ख्यातिप्राप्त विभूतियां 'कल्याण' के सम्पादकीय विभाग से जुड़ीं। श्री घनश्यामदास जालान, गंभीरचन्द्र दुजारी, राधेश्याम बंका, 'कल्याण' के वर्तमान सम्पादक राधेश्याम खेमका आदि का भी 'कल्याण' तथा 'गीता प्रेस' के विकास में योगदान रहा है।

भाईजी 'कल्याण' में प्रकाशित सामग्री का चयन और संपादन स्वयं करते थे। उनका पूरा प्रयास होता था कि इसमें स्तरीय और प्रेरक सामग्री दी जाये। वे प्रतिदिन स्वयं १८-१८ घंटे तक संपादन से लेकर प्रूफ संशोधन का कार्य देखते थे। उन्होंने स्वयं अपने विनम्र स्वभाव और समर्पित व्यक्तित्व के कारण लक्ष्मीनारायण गर्दे, सुदर्शनसिंह चक्र तथा उस समय के जाने-माने विख्यात संपादकों और लेखकों का 'कल्याण' के लिये सक्रिय सहयोग प्राप्त कर लिया।

भाई जी का हमेशा यह प्रयास रहता था कि 'कल्याण' में ऐसी कोई भी रचना प्रकाशित न हो, जो निराधार तथा तथ्यहीन सामग्री पर आधारित हो। वे प्रत्येक घटना और रचना को प्रकाशित करने से पूर्व उसकी जांच परख करना आवश्यक मानते थे। मेरे पिताश्री स्व. भक्त रामशरणदासजी 'पिलखुवा' कल्याण' के नियमित लेखक थे। भाई जी उन्हें समय-समय पर पत्र लिखकर संत महात्माओं के उपदेश तथा लोक-परलोक और पुनर्जन्म की सत्य घटनायें भेजने के लिये प्रेरित करते थे।

एक बार आर्य समाज के महान संन्यासी और दैनिक 'मिलाप' के संस्थापक महात्मा आनंदस्वामी सरस्वती ने अपने पुत्र रणवीर के साथ लाहौर जेल में घटी एक घटना सुनाई। उस घटना का सार यह था कि माँ के हत्यारे कैदी के हाथ का बना भोजन करने से रणवीर जी को सपने आने लगे कि वे अपनी माँ की हत्या करने के लिये छुरा

लेकर दौड़ रहे हैं। पिताजी ने इस घटना को लिखकर भाई जी के पास भेज दिया। भाई जी ने आचार-विचार और खान-पान की शुद्धता की प्रेरणा देने वाली इस घटना को पसंद तो किया, लेकिन इसकी सच्चाई का पता लगाने के लिये रचना की एक प्रति रणवीरजी के पास पुष्टि के लिये भेज दी। रणवीर जी ने इसे पढ़ा और भाई जी को यह लिखकर लौटा दिया कि यह अक्षरश: सत्य घटना है। भाई जी ने कल्याण में रचना के साथ रणवीर जी की टिप्पणी भी प्रकाशित की।

'परलोक और पुनर्जन्म' अंक में प्रकाशित ईरानी प्रेत की मुक्ति की घटना भी इसी तरह प्रमाणिकता परखने की नीति से संबंधित है। यह घटना प्रख्यात सिख संत ईश्वरसिंह राड़ेवाले से संबंधित थी और भाई जी ने घटना का विवरण मिलने के बाद उसकी एक प्रति तैयार कराकर संतजी के पास भेजी। संत श्री राड़ेवाले ने उसकी पुष्टि की तब वह 'कल्याण' में छपी।

गीता प्रेस गोरखपुर ने उनके जीवन काल में पौने छह सौ से ज्यादा पुस्तकें प्रकाशित कर धर्म और नैतिकता प्रचार अभियान को जन-जन तक पहुंचाया। भाई जी को विदेशों में निवास करने वाले भारतीय विशेषत: हिन्दुओं को अपनी प्राचीन संस्कृति, सनातनधर्म तथा राष्ट्र भाषा हिन्दी के प्रति आस्था बनाये रखने में योगदान का श्रेय दिया जा सकता है। 'कल्याण' तथा 'गीता प्रेस' से प्रकाशित साहित्य संसार के हर देश में पहुंचता रहा है। भाई जी समय-समय पर मारीशस, त्रिनीदाद, फीजी, सूरीनाम, ब्रिटेन, दक्षिण अफ्रीका आदि देशों के मंदिरों और पुस्तकालयों को गीता, रामायण और अन्य धार्मिक साहित्य नि:शुल्क भेजते रहते थे। इन देशों के प्रवासी भारतीयों में राष्ट्र भाषा हिन्दी, धर्म तथा भारत के प्रति आस्था बनाये रखने में गीता प्रेस का उल्लेखनीय योगदान है।

भाई जी ने 'कल्याण' के लाखों पाठकों को आध्यात्मिक मूल्यों तथा धर्मशास्त्रों के शाश्वत संदेश से लाभान्वित किया। भाई जी जानते थे कि हमारे पुराण लुप्त होते जा रहे हैं। धर्मशास्त्रों तथा पुराणों के महत्व को ध्यान में रखते हुये उन्होंने जहां 'गीता प्रेस' से 'रामचरितमानस', 'श्रीमद्‌भगवद्‌गीता' जैसे ग्रन्थों को लागत मूल्य पर जन-जन को उपलब्ध कराया, वहीं उन्होंने 'कल्याण' के विशेषांकों के रूप में विभिन्न पुराणों, उपनिषदों तथा अन्य प्राचीन ग्रन्थों को लाखों पाठकों तक पहुँचाने का स्तुत्य कार्य किया। उन्होंने 'कल्याण' के हिन्दू संस्कृति अंक, गोअंक, नारी अंक, बालकांक, तीर्थांक, मानवतांक, सत्यांक, जैसे ४६ विशेषांक अपने संपादन काल में प्रकाशित कर देश-विदेश के लाखों पाठकों तक दुर्लभ सत्साहित्य पहुँचाने का सराहनीय कार्य किया।

भगवान श्री राम के दर्शन

भाई जी समय-समय पर भगवान की अहेतुक कृपा की अनुभूति करते रहते थे। अनेक बार वे समाधिस्थ हो जाया करते थे। ऐसी ही एक सत्य घटना की अनुभूति का उन्होंने निम्न शब्दों में वर्णन किया है-

''बम्बई की बात है। मैं श्रीसागरमल गनेड़ीवाले के साथ सूरदास का नाटक देखने जाने वाला था। सागरमल का घर रास्ते में ही था। सागरमल ने कहा कि भगवन्नाम जप,

भगवत् स्मृति के साथ होने से विशेष फल होता है। मैं कहता था कि नहीं, किसी भाव से जाने या अनजाने में अन्त समय यदि ''रा'' और ''म'' ये दो अक्षर मुखसे निकल गये तो प्राणी की सद्‌गति होगी ही, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है। इस मंत्र के अक्षरों में ही एक ऐसी शक्ति है। यह सुनकर सागरमल ने कहा- आर०ए०एम०- राम का अर्थ अंग्रेजी में मेंढ़ा होता है। यदि कोई अंग्रेज मरते समय मेंढ़े के भाव से ''राम'' पुकार उठे तो क्या उसकी सद्‌गति हो जाएगी? उसके ज्ञान में राम का अर्थ मेंढ़े के अतिरिक्त कुछ है ही नहीं। बोलो क्या उत्तर है? मैंने कहा- मेरे विश्वास के अनुसार तो उसकी गति हो जानी चाहिए। यह बात हो ही रही थी कि हठात् मेरा बाह्य ज्ञान जाता रहा। मेरे नेत्र तो खुले थे पर बाहर से कुछ होश नहीं रहा। नेत्र खुले हुए मैं ज्यों-का-त्यों उसी स्थान पर बैठा रहा। मुझे इतना स्मरण है कि उस समय मुझे वनवेषधारी भगवान श्री राम, लक्ष्मण और सीता के दर्शन हुए। कितनी देर तक दर्शन होते रहे, यह याद नहीं। बातें भी हुई थीं, पर सब बातें स्मरण नहीं रहीं। केवल दो बातें याद रहीं। एक तो भगवान् ने कहा था- किसी प्रकार भी नाम लेने वाले की सद्‌गति ही होगी। दूसरी यह कि भगवान ने भक्त विष्णुदिगम्बर जी गायनाचार्य का इसी सिलसिले में नाम लिया था। इसके अतिरिक्त और कुछ भी याद नहीं रहा। होश आने पर दूसरे दिन सागरमल ने मुझसे कहा कि तुम उस समय कह रहे थे कि ''यह भगवान् हैं, इनके चरण पकड़ लो'' आदि-आदि। पर मुझे न तो बाहर का ज्ञान था, न मैंने अपने ज्ञान में कुछ कहा ही था। अस्तु, इस प्रकार सारी रात बीत गयी। मुझे बाह्यज्ञान नहीं हुआ। अब सागरमल घबड़ा गया कि इसे क्या हो गया? आखिर उसने मेरा हाथ पकड़कर खड़ा किया, पकड़े हुए ही मुझे सीढ़ियों से नीचे उतार लाया। फिर उसी तरह मेरे घर मुझे ले आया। घर आने पर मुझसे कहा कि शौच हो आओ, पर मुझे तो बिल्कुल ही होश नहीं था कि बाहर क्या हो रहा है। इसलिए मैंने उसे कोई उत्तर नहीं दिया। मुझे उसी तरह बाह्यज्ञान शून्य देखकर उसने मुझे पानी के नल के नीचे बिठा दिया। मेरे सिर पर जल की धार गिरने लगी और स्वयं सागरमलजी नाम-कीर्तन करने लगे। अब जाकर मुझे कहीं धीरे-धीरे बाह्यज्ञान हुआ। उसी दिन दोपहर के समय श्री विष्णु दिगम्बर जी मुझसे मिले। मैंने उन्हें सारी घटना सुना दी। सुनकर वे रोने लग गये।''

नेहरु जी के लिए अपनी कार दी

सन् १९३६ में गोरखपुर में भीषण बाढ़ आई तो हजारों व्यक्ति बेघरबार हो गये थे। भाई जी बाढ़-पीड़ितों की सहायता के लिए तन-मन से जुटे रहे थे।

उसी दौरान जवाहरलाल नेहरू बाढ़-पीड़ित क्षेत्र की स्थिति का निरीक्षण करने के लिए गोरखपुर आए। उस समय नेहरुजी के लिए कार की आवश्यकता हुई। अंग्रेज कलेक्टर ने धमकी दे रखी थी कि यदि किसी ने नेहरुजी को कार दी तो उसका नाम विद्रोहियों में

लिख लिया जाएगा। गोरखपुर के कुछ रईसों के पास कार थी, किन्तु उन्होंने अंग्रेज कलेक्टर के भय के कारण नेहरूजी के लिए अपनी कार देने से इनकार कर दिया। बाबा राघवदास भाई जी के पास पहुँचे तथा उनसे नेहरूजी के लिए कार की व्यवस्था करने को कहा। भाईजी ने तुरन्त कार दे दी। वे शुरु से ही निर्भीकता की मूर्ति थे।

सन् १९३८ में राजस्थान के विभिन्न क्षेत्रों में भयंकर अकाल पड़ा तब भी भाई जी अकाल-पीड़ितों की सेवा के लिए उस क्षेत्र में पहुँचे तथा अकाल-पीड़ित ग्रामीणों के साथ-साथ गाय-बैलों के चारे की भी उन्होंने व्यवस्था कराई। वे कहा करते थे- 'पीड़ित मानव की सेवा से बढ़कर दूसरा धर्म नहीं है। हमारे धर्म-शास्त्रों में सेवा तथा सहायता को सर्वोपरि धर्म बताया गया है।'

वैदिक ज्ञान के प्रचार-प्रसार के उद्देश्य से भाई जी ने चारों धामों में 'वेद-भवन' स्थापित करने की योजना बनाई।

गोरक्षपीठाधीश्वर महन्त दिग्विजयनाथजी महाराज के सान्निध्य में २७ जनवरी १९६५ को गोरक्षपीठ में योजना को अंतिम रूप दिया गया। इसके बाद बद्रीनाथ, जगन्नाथपुरी, रामेश्वरम्, द्वारका, कालडी, श्रीरंगम आदि स्थानों पर वेद-भवन तथा विद्यालय स्थापित किये गये। इन विद्यालयों में वैदिक ऋचाओं के सस्वर पाठ तथा वेदों के अध्ययन की नियमित शिक्षा दी जा रही है।

राष्ट्रपति डा. राजेन्द्रप्रसाद भाई जी के प्रति बहुत श्रद्धा रखते थे। उन्होंने ही गीता प्रेस के मुख्य द्वार का उद्घाटन किया था।

'भारत रत्न' उपाधि ठुकराई

भाई जी पदों तथा उपाधियों आदि के मोह से हमेशा दूर रहे। अंग्रेजों के जमाने में गोरखपुर में उनकी धर्म तथा साहित्य सेवा को देखते हुए गोरखपुर के अंग्रेज कलेक्टर पेडले साहब ने उन्हें 'राय साहब' की उपाधि से अलंकृत करने का प्रस्ताव रखा जिसे भाई जी ने विनम्रतापूर्वक अस्वीकार कर दिया।

इसके बाद अंग्रेज कमिश्नर मि० होबर्ट ने उन्हें 'राय बहादुर' की उपाधि देनी चाही, उसे भी उन्होंने अस्वीकार कर दिया।

देश की स्वाधीनता के बाद डॉ० सम्पूर्णानन्द जी, श्री कन्हैयालाल मुंशी आदि के परामर्श से केन्द्रीय गृहमंत्री श्री गोविन्द बल्लभ पंत ने भाई जी को 'भारत रत्न' की उपाधि से अलंकृत करने की योजना बनाई। पंतजी ने भाई जी से इस उपाधि के लिए स्वीकृति का अनुरोध किया किन्तु भाई जी ने बहुत विनम्रतापूर्वक कहा कि मैं 'उपाधि की व्याधि' से मुक्त रहने का संकल्प कर चुका हूँ। इसलिए कृपया मेरे संकल्प में बाधा न डालें। इस प्रकार भाई जी ने कभी भी महत्त्वाकांक्षा को पास नहीं फटकने दिया।

उच्च कोटि के लेखक

भाई जी स्वयं एक उच्चकोटि के कवि, लेखक तथा साहित्य साधक थे। भगवान श्री कृष्ण तथा अपनी आराध्या राधा जी की भक्ति में तन्मय होकर उन्होंने हजारों भजनों तथा भक्तिगीतों की रचना की थी।

लेखन कार्य में तल्लीन भाईजी

भाई जी के भक्ति से ओत-प्रोत प्रभावी भजनों का संग्रह पांच भागों में 'पत्र-पुष्प' नाम से प्रकाशित हुआ। 'प्रार्थना पीयूष', 'हरि प्रेरित हृदय की वाणी', श्री राधा माधव रस सुधा', ब्रजरस माधुरी' आदि भाई जी द्वारा विरचित पदों का संग्रह है।

भाई जी ने निबंध, समाज को प्रेरणा देने वाले लेख, साधना-साहित्य, उद्बोधक आदि विभिन्न विषयों पर २५ हजार से ज्यादा पृष्ठों का साहित्य-सृजन किया। अश्लील और फूहड़ फिल्मों का समाज पर कितना भयंकर प्रभाव पड़ेगा, यह भाई जी आज से 70 वर्ष पूर्व ही जान गये थे। उन्होंने 'सिनेमा मनोरंजन या विनाश का साधन' पुस्तिका लिखकर युवा पीढ़ी को अश्लील फिल्मों के दृश्यों से बचाने की प्रेरणा दी थी। दहेज के नाम पर नारी उत्पीड़न की आशंका से त्रस्त भाई जी ने 'विवाह में दहेज' जैसी प्रेरक पुस्तक लिखी

थी। शिक्षा कैसी हो, इस पर उन्होंने 'वर्तमान शिक्षा', 'नारी शिक्षा' जैसी पुस्तकें लिखीं।

साहित्य रचना का उद्देश्य

भाई जी के लेखन का उद्देश्य समाज में नैतिक मूल्यों के महत्व को प्रतिपादित करना तथा समाज को भगवद्भक्ति तथा सद्मार्ग की ओर प्रेरित करना था। उन्होंने अपने ग्रन्थ 'पूर्ण समर्पण' में साहित्य की व्याख्या करते हुये लिखा था:-

'मनुष्य-जीवन का प्रधान उद्देश्य है भगवत् साक्षात्कार या भगवत्प्रेम। इसी में जीवन की सार्थकता है। अतएव जगत् की प्रत्येक वस्तु भी तभी सार्थक होती है, जब उसका प्रयोग भगवान के लिये हो। साहित्य एक बड़ी महत्व की वस्तु है। उसमें मनुष्य के चित्त को खींचकर उसे चाहे जिस ओर लगा देने की शक्ति है। साहित्य का ही प्रभाव था कि एक दिन भारत की गति सर्वथा भगवद्विमुखी थी। आज यह दूषित साहित्य का ही प्रभाव है कि भारतीय मानव भक्ति की जगह भोगों की ओर दौड़ रहा है। जो साहित्य मनुष्य की अंतर की सुप्त पवित्र सात्त्विक भावनाओं को जगाकर उसे भगवद्विमुखी बना देता है, वही सत्-साहित्य है और उसी से मानव का कल्याण होता है। इसके विपरीत जिस साहित्य से भोग वासना बढ़ती है, जो अंदर की असत्-वृत्तियों को उभारकर मानव को भगवान् की ओर से हटा देता है और भोगों की अदम्य लालसा से व्याकुल कर देता है, वह असत् साहित्य है और उससे मानव-जगत् का सर्वतोमुखी पतन होता है।'

भक्त-हृदय कवि

भाई जी उच्च कोटि के भक्त-हृदय कवि थे। उनके लिखे भक्ति गीत 'पद-रत्नाकर' ग्रन्थ में संकलित हैं। उन्होंने मुम्बई में निवास करते समय यह पद रचा था:-

'आया चरन तकि सरन तिहारी। बेगि करौ मोहि अभय बिहारी॥
जोनि अनेक फिरयो भटकान्यो। अब प्रभु पद छाड़ों न मुरारी!॥
मो सम दीन न दाता तुम सम। भली मिली यह जोरि हमारी॥
मै हौं पतित, पतितपावन तुम। पावन करु, निज विरद सभारी॥

(पद-रत्नाकर पद सं १४४)

उन्होंने यह भी अनुभव किया कि किसी का भी भरोसा नहीं किया जा ... केवल प्रभु का भरोसा ही सच्चा है-

अब हरि! एक भरोसो तेरो।
नहि कुछ साधन ग्यान भगति को, नहि विराग उर हेरो॥
अघ ढोवत अघात नहि कबहूँ, मन विषयनको चेरो।
इंद्रिय सकल भोगरत संतत, बस न चलत, कुछ मेरो॥
काम-क्रोध-मद-लोभ सरिस अति प्रबल रिपुनतें घेरो।
परबस परयो, न गति निकसन की यदपि कलेस घनेरो॥

परखे सकल बंधु नहिं कोऊ विपदकालको नेरो।
दीनदयाल दया करि राखउ, भव जल बूड़त बेरो॥

(पद-रत्नाकर पद सं. १२३)

भाई जी प्रभु के प्रति पूर्ण समर्पण भाव से लिखते हैं:

नाथ! तुम्हारी कितनी करुणा, कैसा अतुल तुम्हारा दान।
हटा असत् माया का पर्दा, दिया स्वयं ही दर्शन ज्ञान॥
नहीं रह गया अब तो कुछ भी अन्य, छोड़ कर तुमको एक।
मिथ्या जग में रमने वाले, रहे न मिथ्या बुद्धि-विवेक॥
आते लोग, सुनाते अपनी विषम समस्याओं की बात।
सुलझाने का उन्हें पूछते साधन, सविनय कर प्रणिपात॥
कहूँ उन्हें, समझाऊँ क्या मैं, जब न दीखता कुछ सत् सार।
सुलझाने वाले उस मनको गया सर्वथा लकवा मार॥

जब मन तनिक भी संसार की ओर जाने लगता तो वे तुरन्त कह उठते-

प्रभु! मेरो मन ऐसो ह्वै जावै।
विषयनको विष सगरो उतरै, पुनि नहि कबहूँ छावै।
बिनसै सकल कामना मनकी अनत न कतहूँ धावै॥
निरखत निरत निरंतर माधुरी, स्याम मुरति सुख पावै॥
कामी जिमि कामिनि-सँग चाहै, लोभी धन मन लावै।
तिमि अविरत निज प्रियतम की सुधि, छिन इक नहिं बिसरावै॥
ममता सकल जगत की छूटै, मधुर स्याम छवि भावै॥
तव आनन-सरोज-रस चाखन मन मधुकर बनि जावै॥

(पद-रत्नाकर पद सं. १३२)

भाई जी राधा-माधव की आराधना करते करते स्वयं राधा-माधव के प्रेम में खो जाते थे। उन्होंने लिखा:-

'राधा-माधव-माधव राधा', छाये देश काल सब ओर।
नाच रही राधा मतवाली, मुरली टेर रहे मनचोर॥
देखो-सुनो, सदा सबमें, सर्वत्र भरे दोनों रसधाम।
मधुर मनोहर मूरति, मुरली-धुनि बरसाती सुधा ललाम॥
लीला लीलामय ही हैं सब, लीला लीलामय सर्वत्र।
लीला लीलामय ही रहते, करते लीला विविध विचित्र॥
नित्य मधुर दर्शन सम्भाषण, स्पर्श मधुर नित नूतन भाव।
नित नव मिलन, नित्य मिलनेच्छा, नितनवरस-आस्वादन चाव॥

भाई जी आचार-विचार, संयम, मर्यादा आदि को लोक-परलोक का प्रमुख साधन

मानते थे। देश के कोने-कोने से लाखों जिज्ञासु भाई जी के लेखों और साहित्य से प्रभावित होकर लोक-परलोक की समस्याओं के बारे में उन्हें पत्र लिखकर उनका समाधान चाहते थे। इन पत्रों और उनके उत्तरों को '**लोक-परलोक का सुधार**' नाम से पांच भागों में प्रकाशित किया गया।

भाई जी ने हजारों निबंध धर्म, संस्कृति तथा विभिन्न विषयों पर लिखे। ईश्वर से संबंधित निबंधों का संग्रह 'भगवच्चर्चा' नाम से छह भागों में प्रकाशित हुआ। वे श्री राधा-माधव के अनन्य भक्त थे। श्री राधा-माधव के स्वरूप, प्रेम तथा लीलातत्त्व का विशद विवेचन उनके 'श्री राधा माधव चिन्तन' ग्रन्थ में किया गया है।

भाई जी स्वयं पहुँचे हुये सिद्ध साधक थे। उनके साधना-साहित्य में साधन पथ, मानव-धर्म, श्री भगवन्नाम, दिव्य संदेश, गीता में विश्व रूप का दर्शन, मन को वश में करने के कुछ उपाय, कल्याणकारी आचरण, प्रार्थना, रस और भाव, गोपी प्रेम, रासलीला का रहस्य, सत्संग के बिखरे मोती, भगवान श्रीकृष्ण का स्वरूप-तत्व आदि ग्रन्थों के नाम उल्लेखनीय हैं।

भगवन्नाम संकीर्तन का महत्व

भाई जी तथा सेठ जयदयाल गोयन्दका ने जगह-जगह गीता-ज्ञान-यज्ञ समारोहों तथा भगवन्नाम संकीर्तन महोत्सवों के माध्यम से भक्ति भागीरथी प्रवाहित कर करोड़ों लोगों को सद्मार्ग पर चलाने का कार्य किया। संवत् १९८६ में तीर्थराज प्रयाग में आयोजित कुंभ के अवसर पर 'गीता-ज्ञान-यज्ञ समारोह' का भव्य आयोजन किया गया। महामना पंडित मदनमोहन मालवीयजी महाराज के कर-कमलों से इस धार्मिक समारोह का शुभारंभ कराया गया। विख्यात संगीतज्ञ पं० विष्णु दिगम्बर स्वयं भगवन्नाम संकीर्तन करते तो भाई जी तथा अन्य उपस्थित जन तन्मय होकर नृत्य करने लगते थे।

महान सिद्ध संत पूज्य श्री हरिबाबा ने बदायूँ जिले में अपने पतित पावनी गंगा जी के बाँध पर आयोजित संकीर्तन समारोह में भाई जी को आमंत्रित किया। फाल्गुन शुक्ल १२ संवत् १९९० को भाई जी बाँध उत्सव में भाग लेने पहुँचे। वहाँ परम सिद्ध सन्त श्री उड़िया बाबा, आनन्दमयी माँ, श्री भोले बाबा, श्री नागा बाबा, स्वामी कृष्णानन्द जी, स्वामी शिवानन्द जी, सन्त प्रभुदत्त ब्रह्मचारी आदि विभूतियों के साथ संकीर्तन महोत्सव में शामिल ही नहीं हुए अपितु जब संकीर्तन के दौरान वे स्वयं घण्टों तक 'हरि बोल-हरि बोल' की सुमधुर ध्वनि के बीच मस्ती के साथ नृत्य करते रहे तो हजारों भक्तजन मंत्रमुग्ध हो उठे थे।

अगले ही वर्ष संवत् १९९१ में भाई जी ने झूँसी (प्रयाग) में सन्त प्रभुदत्त ब्रह्मचारी जी के आश्रम में ६ महीने के अखण्ड हरिनाम संकीर्तन का आयोजन शुरु कराया। अगले वर्ष वे स्वयं झूँसी पहुँचे तथा वहाँ संकीर्तन महोत्सव में भाग लिया। भाई जी ने उस दौरान कहा था-'कलियुग में भगवन्नाम ही सर्वोपरि साधन है। मेरी तो प्रथम और अंतिम एकमात्र

यहीं अनुभूति है कि अपना कल्याण चाहने वाला व्यक्ति नाम का आश्रय पकड़ ले। यदि और कुछ नहीं कर सके तो शुद्ध हृदय तथा अपनी जीभ से निरन्तर नाम जप करता रहे। उसका कल्याण होने में कोई सन्देह नहीं है।'

भाई जी जीवन के अन्तिम क्षणों तक श्री भगवन्नाम प्रचार के कार्य में जुटे रहे। वे अपने साहित्य तथा लेखों के माध्यम से भगवन्नाम संकीर्तन के महत्व का प्रतिपादन कर लोगों को नाम-जप की प्रेरणा देते रहे। उन्होंने 'श्री राधा माधव संकीर्तन मण्डल' की स्थापना कराई तथा गोरखपुर, बरेली, गाजियाबाद, दिल्ली, वृन्दावन, बम्बई, कलकत्ता आदि स्थानों पर संकीर्तन महोत्सवों के भव्य आयोजन कराए। श्री रामनिवास ढंढारिया, सेठ जयदयाल डालमिया, मुरलीधर मल्होत्रा, जसवन्तराय मलिक, आशानंद मलिक आदि उनके इस अभियान को निरन्तर आगे बढ़ाते रहे।

भाई जी कलियुग में भगवन्नाम संकीर्तन को ही 'कल्याण' का एक मात्र साधन मानते थे। उन्होंने लिखा- 'कलियुग में हम तप, दान तथा शास्त्र मर्यादाओं का दृढ़ता के साथ पालन नहीं कर सकते। शास्त्रों में भगवन्नाम संकीर्तन को ही कलियुग में सबसे बड़ा मुक्ति का साधन बताया गया है। अतः शुद्ध हृदय तथा शुद्ध आचार-विचार का पालन करते हुये हमें भगवन्नाम संकीर्तन जाप, आदि का नियम बनाना चाहिए, किन्तु भगवन्नाम का फल तभी मिलेगा, जब हम पूर्ण रूप से ईमानदार तथा अपने कर्तव्यों के प्रति-निष्ठावान बनेंगे।'

भाई जी की प्रेरणा से देश भर में जगह-जगह भगवन्नाम संकीर्तन तथा सामूहिक जाप के आयोजन किये जाते रहे। श्री राधाष्टमी तथा अन्य पर्व देशभर में धूमधाम से मनाये

अपने अनन्य सहयोगी पूज्य श्री राधाबाबा के साथ समाधि अवस्था में भाईजी

जाने लगे। भाई जी के परम भक्त श्री श्यामसुन्दर दुजारी तथा परम भागवत् रामनिवास ढंढारिया आदि ने भाई जी के जीवन में भगवन्नाम संकीर्तन के माध्यम से प्रकट सिद्धियों की अनेक घटनाओं को प्रकाशित कराया है। भाई जी जीवन के अंतिम क्षणों तक भगवन्नाम संकीर्तन के प्रचार-प्रसार में सक्रिय रहे।

मालवीय जी की प्रेरणा

महामना पंडित मदनमोहन मालवीय जी भाई जी से बहुत स्नेह करते थे। वहीं भाई जी मालवीय जी के प्रति अनन्य श्रद्धा रखते थे। वे समय-समय पर भाई जी को आशीर्वाद दिया करते थे। भाई जी ने मालवीय जी के संस्मरणों में स्वयं लिखा है-'मालवीय जी एक बार गोरखपुर पधारे थे और मेरे पास ही दो-तीन दिन ठहरे थे। उनके पधारने के दूसरे दिन प्रात: काल मैं उनके चरणों में बैठा था। वे अकेले ही थे। बड़े स्नेह से बोले- 'भैया! मैं तुम्हें आज एक दुर्लभ तथा बहुमूल्य वस्तु देना चाहता हूँ। मैंने इसको अपनी माता से वरदान के रूप में प्राप्त किया था। बड़ी अद्‌भुत वस्तु है। किसी को आज तक नहीं दी, तुम्हें दे रहा हूँ। देखने में चीज छोटी-सी दीखेगी, पर है महान 'वरदान-रूप'। इस प्रकार प्राय: आधे घंटे तक वे उस वस्तु की महत्ता पर बोलते गये। मेरी जिज्ञासा बढ़ती गयी। मैंने आतुरता से कहा-'बाबूजी! जल्दी दीजिये, कोई आ जायेगा'।

तब वे बोले-'लगभग चालीस वर्ष पहले की बात है। एक दिन मैं अपनी माता जी के पास गया और बड़ी विनय के साथ मैंने उनसे यह वरदान मांगा कि मुझे आप ऐसा वरदान दीजिये, जिससे मैं कहीं भी जाऊं-सफलता प्राप्त करूं।

माता जी ने स्नेह से मेरे सिर पर हाथ रखा और कहा-'बच्चा! बड़ी दुर्लभ चीज दे रही हूँ। तुम जब कहीं भी जाओ, तो जाने के समय 'नारायण-नारायण' उच्चारण कर लिया करो, तुम सदा सफल होओगे'। मैंने श्रद्धापूर्वक सिर झुकाकर माताजी से मंत्र ले लिया। हनुमान प्रसाद! मुझे स्मरण है, तब से अब तक मैं जब-जब चलते समय 'नारायण-नारायण' उच्चारण करना भूला हूँ, तब-तब असफल, हुआ हूँ। नहीं तो मेरे जीवन में-चलते समय 'नारायण-नारायण' उच्चारण कर लेने के प्रभाव से कभी असफलता नहीं मिली। आज यह महामंत्र-'अपनी माता की दी हुई परम दुर्लभ वस्तु तुम्हें दे रहा हूँ। तुम इससे लाभ उठाना। यों कहकर महामना गद्‌गद् हो गये।

मैंने उनका वरदान सिर चढ़ाकर स्वीकार किया और इससे बड़ा लाभ उठाया। अब तो ऐसा हो गया है कि घर भर में सभी इसे सीख गये हैं। जब कभी घर से बाहर निकला जाता है, तभी बच्चे भी 'नारायण-नारायण' उच्चारण करने लगते हैं। इस प्रकार रोज ही-किसी दिन तो कई बार 'नारायण' की और साथ ही पूज्य मालवीय जी की पवित्र स्मृति हो जाती है।

इसी यात्रा में वे आजमगढ़ से मोटर में आये थे। मैं राप्ती नदी के उस पार उन्हें लाने गया था। उनकी मोटर को नाव से पार उतरना था। मैं उस पार जाकर ठहर गया और श्री

मालवीय जी के आने पर उनके चरण छूकर मैंने प्रणाम किया। उनके चेहरे पर उदासी छायी थी। सदा हँसमुख रहने वाले महामना के मुख पर गंभीरता तथा उदासी देखकर मैंने कारण पूछा, तब आपने बताया कि 'मुझे इस बात से बड़ा विषाद हो रहा है कि थोड़ी ही दूर पर इस मोटर से दबकर एक गिलहरी मर गयी। मैं जब तक प्रायश्चित न कर लूंगा, मुझे शांति नहीं होगी'। मैं क्या कहता। उन्होंने गोरखपुर पहुँचने के बाद शिव के षड्क्षर 'ॐ नमः शिवाय' मंत्र का जप करके प्रायश्चित किया और गिलहरी की सद्गति के लिये भगवान् महेश्वर से प्रार्थना की। जीवदया और ब्राह्मण के सदय हृदय का यह अनूठा उदाहरण है।

भाई जी तथा राधा बाबा के नाम से विख्यात श्री चक्रधर मिश्र, दोनों एक शरीर दो प्राण थे। अपने जमाने के जाने-माने क्रांतिकारी 'राधा बाबा' ने अपना समस्त जीवन ही भाई जी तथा उनके भगवन्नाम प्रचार अभियान को समर्पित कर दिया था। राधा बाबा स्वयं उच्चकोटि के साधक तथा भक्त-हृदय कवि थे।

पारसी प्रेत की मुक्ति कराई

भाई जी केवल इस लोक के प्राणियों के कल्याण के लिए ही तत्पर नहीं रहते थे अपितु अपने दुष्कृत्यों के कारण प्रेत योनि में यातनाएँ भोगने वालों की भी उन्होंने समय-समय पर मुक्ति कराई थी।

संवत् १९८२ में बम्बई में उनकी एक पारसी प्रेत से अचानक भेंट हुई थी। उसे प्रेत योनि से मुक्ति दिलाने के लिए उन्होंने अपने विश्वस्त व्यक्ति को गया भेजकर उसका श्राद्ध कराया था। उन्होंने इस चमत्कारिक घटना का वर्णन निम्न शब्दों में किया-

''साधना प्रारम्भ होने पर उसमें तीव्रता आने लगी थी। मैं प्रतिदिन सायंकाल भोजन करने के पश्चात् बम्बई में चौपाटी पर समुद्र के किनारे चला जाता था। बहुत सी बेंचे पड़ी रहती थी, वहां बैठकर नाम-जप एवं भगवत्चिन्तन करता था। एकान्त रहता था, कुछ अंधेरा-सा रहता था। एक दिन मैं बेन्च पर बैठा नाम-जप रहा था। अचानक मेरी बेंच के ठीक सामने मेरे पैरों की तरफ एक पारसी सज्जन खड़े दिखायी दिये। पारसियों के जो पुरोहित विशेष प्रकार की पोशाक पहनते हैं, वे वैसी पोशाक पहने हुए थे। मैं बहुत देर तक नाम-जप करता रहा, वे खड़े रहे। फिर सभ्यतावश मैंने कहा- ''साहब जी! आप बैठ जाइए, खड़े-खड़े आपको बहुत देर हो गयी।'' वे बोले- ''आप डरियेगा नहीं, मैं प्रेत हूँ।'' यह सुनते ही मैं भयभीत हो गया, मुझे पसीना आ गया। उन्होंने फिर कहा- ''आप डरिए नहीं, मैं आपका अनिष्ट नहीं करूँगा। मैं आपसे सहायता चाहता हूँ, आपका मङ्गल होगा।'' यह सुनकर मैं कुछ आश्वस्त हुआ। उन्होंने कहा- ''यदि आप पहले मुझसे बात नहीं करते तो मैं बोल नहीं पाता। मुझमें ऐसी ताकत नहीं है कि यहाँ के लोगों से मैं पहले बोल सकूँ। इसीलिए मैं प्रतीक्षा करता रहा कि आप बोलें। प्रेत लोक में अनेक स्तर हैं, प्रेतों

की विभिन्न शक्तियाँ हैं। मैं सब जगह जा सकता हूँ, हर एक को दिखाई दे सकता हूँ, पर मुझसे कोई पहले नहीं बोले तो मैं बोल नहीं सकता। प्रेत-लोक में मेरी स्थिति अच्छी नहीं है। आप कृपा करके किसी को भेजकर गया में मेरे लिए पिण्डदान करवा दें तो मेरी सद्‌गति हो जाएगी।''

मैंने उनसे कहा- ''आप पारसी हैं, आप लोग श्राद्ध पर विश्वास नहीं करते, फिर श्राद्ध करने की बात कैसे कहते हैं।'' उन्होंने उत्तर दिया- ''सत्य यदि सत्य है तो जाति सापेक्ष नहीं है। जीव में जाति का भेद नहीं होता।'' उन्होंने अपने बम्बई के निवास स्थान का नाम-पता बताया। इसके पश्चात् वे अन्तर्धान हो गए। दूसरे दिन उनके कथनानुसार मैंने उनका पता लगाया। वे बम्बई के बाँदरा नामक अञ्चल में रहते थे। कुछ महीने पहले उनकी मृत्यु हुई थी। उनके नाम आदि सब पता मिल गया। वे पारसी होने पर भी हिन्दू धर्म में श्रद्धा रखते थे, गीतापाठ किया करते थे। सब बातों का ठीक-ठाक पता लग जाने पर मैंने अपने पास रहने वाले ब्राह्मण हरीराम को गया भेजकर उनका श्राद्ध एवं पिण्डदान करवाया। जिस दिन गया में उनके लिए पिण्डदान हुआ, उसी दिन चौपाटी में ही मुझे उनके फिर दर्शन हुए। उन्होंने कहा- ''मैं आपके प्रति कृतज्ञता प्रकट करने आया हूँ। आपने मेरी मुक्ति की व्यवस्था कर दी है। अब मैं प्रेतलोक से उच्च लोक में जा रहा हूँ।'' उनकी बात सुनकर मुझे बड़ा सन्तोष हुआ। मैंने प्रेत से प्रेतलोक की स्थिति, वहाँ के जीवन कर्मों के फल आदि के बारे में बहुत-सी बातें पूछी। उन्होंने सब बातों का सविस्तार उत्तर दिया। उन्होंने बताया- किसी के प्रति बैर लेकर मरने वालों की बहुत दुर्गति होती है। उसे नरकों में बड़ा कष्ट होता है। सब नरक सत्य हैं। नाना प्रकार के पाप करने वालों की बहुत दुर्गति होती है। प्रेतलोक में बहुत से सद्‌भावना युक्त प्रेत हैं, बहुत-से दुर्भावना युक्त। वृत्ति के अनुसार उनके स्वभाव एवं कर्म होते हैं और उसी प्रकार का बर्ताव वे यहाँ के व्यक्तियों के प्रति करने की चेष्टा करते हैं। प्रेतलोक के प्राणियों के लिए अन्न-जल वस्त्रादि का दान उनके नामपर घरवालों को सदा करते रहना चाहिए। प्रेतों को सद्‌गति प्राप्त कराने के लिए गया श्राद्ध, पिण्डदान, गायत्री जप, भागवत्-पारायण, विष्णु सहस्रनाम-पाठ और अपने-अपने धर्मानुसार भगवान् की प्रार्थना करने से उन्हें बहुत लाभ होता है।'

नोआखाली के पीड़ितों की सहायता

भारत विभाजन के दौरान सन् १९४९ में नोआखाली (पूर्वी बंगाल) में जब हिन्दुओं का भीषण नरसंहार किया गया, हिन्दू महिलाओं पर अत्याचार ढाये गये तो भाई जी का हृदय द्रवित हो उठा। महामना पं० मदनमोहन मालवीय जी महाराज के हृदय को तो इन घटनाओं से इतना गहरा आघात लगा कि उनका देहान्त हो गया।

भाईजी ने श्री कृष्णचन्द्र अग्रवाल, श्री कृष्णदास बंगाली तथा गिरधारी बाबा को पीड़ित हिन्दुओं की सहायतार्थ नोआखाली भेजा।

भाई जी ने महामना मालवीय जी की पावन स्मृति में 'कल्याण' का अंक निकाला जिसे सरकार ने आपत्तिजनक घोषित कर जब्त कर लिया।

ईश्वरीय चमत्कार की एक अनुभूति

भाई जी उच्च कोटि के साधक तथा परम भगवद्भक्त थे। इसका ज्वलन्त प्रमाण समय-समय पर घटित चमत्कारिक घटनाएँ हैं। प्रख्यात आध्यात्मिक लेखक तथा 'कल्याण' में वर्षों तक सम्पादकीय सहयोगी रहे श्री सुदर्शनसिंह 'चक्र' को मृत्यु के मुख में जाने से उन्होंने किस प्रकार रोका यह श्री चक्रजी द्वारा लिखित निम्न अनुभूति से पता चलता है-

''सन् १९५५ की बात है। मैं कैलाश-मानसरोवर की यात्रा करके लौटा था। थकावट के स्थान पर मन में उत्साह था। चाहता था कि लगे हाथ मुक्तिनाथ-दामोदर कुण्ड की भी यात्रा हो जाय तो उत्तराखण्ड के प्राय: सब तीर्थों की मेरी यात्रा पूरी हो जाय। मैंने भाई जी से मुक्तिनाथ जाने की अनुमति माँगी और वह मिल गयी।

सितम्बर के दूसरे सप्ताह से अक्टूबर तक यात्रा होनी चाहिए थी। यही सबसे उपयुक्त मौसम था। सब तैयारी हो चुकी थी। सोचा कि गोरखपुर से ऐसी बस पकड़ेंगे कि उसी दिन हवाई जहाज मिल जाय। भैरहवा में रात्रि व्यतीत करके दूसरे दिन पैदल यात्रा प्रारम्भ कर दें।

सामान बाँध लिया गया। बस अड्डे के लिए रिक्शा बुला लिया गया। तब मैं भाई जी को प्रणाम करने उनके कमरे में गया।

भाई जी गीता वाटिका के सम्पादन-कार्यालय वाले अपने कमरे में चटाई पर बैठे थे। कागज देख रहे थे। मैंने जाकर प्रणाम किया।

'आप जा रहे हैं?' अचानक भाई जी ने मुख लटका लिया। उनका स्वर भारी और उदास हो गया। वे बोले, ''जाइये, 'कल्याण' के विशेषाङ्क (सत्कथाङ्क) के लिए अभी चित्र निश्चित नहीं हुए, चित्रकारों को निर्देश नहीं दिए। मैं खटूँगा, करूँगा ही किसी प्रकार।''

सर्वथा अकल्पित स्थिति थी। मैंने बहुत पहले इस यात्रा के सम्बन्ध में पूछ लिया था। उन्होंने प्रसन्न होकर अनुमति दे दी थी। आवश्यक प्रमाण-पत्र पाने में सहायता की थी। चित्रों का चुनाव, उनके सम्बन्ध में चित्रकारों को निर्देश श्री भाई जी ही सदा करते थे। मैंने बहुत अल्प सहायता ही इसमें कभी-कभी की थी।

सबसे विशेष स्थिति यह थी कि श्री भाई जी को इस प्रकार बोलते सुनने का यह मेरे लिए पहला अवसर था। आगे कभी मैंने उनको इस स्वर में बोलते नहीं सुना। मेरे लिए उनका यह स्वर असह्य था। अत: मैंने यह कह दिया, ''आप ऐसे क्यों बोलते हैं? मना करना है तो सीधे मना कर दीजिए।''

इतना सुनते ही उल्लास-भरे स्वर में पूरे जोर से भाई जी ने उस समय के सम्पादन-विभाग के व्यवस्थापक दुलीचन्दजी दुजारी को पुकार कर कहा, ''भाया, रिक्शा लौटा दें। सुदर्शन जी नहीं जा रहे हैं।''

अब मेरे कहने को कुछ रह ही नहीं गया था। मैं चुपचाप उठ आया। रिक्शा लौट गया। बिस्तर खोल दिया गया। मन में कुछ दुःख हुआ ही।

दूसरे दिन मैं अपने नित्य-कर्म से निवृत्त हुआ ही था कि भाई जी मेरे कमरे के द्वार पर आ खड़े हुए। बड़े गम्भीर स्वर में बोले, 'सुदर्शनजी! बड़ी दुर्घटना हो गयी।'

'क्या हुआ?' मैने पूछा।

अभी जिलाधीश का फोन आया था। उन्होंने पूछा था कि 'आपके यहाँ से जो मुक्तिनाथ जाने वाले थे, वे कल गये या नहीं।''मैंने कह दिया कि नहीं गये।' उन्होंने बतलाया कि 'कल जाने वाला हवाई जहाज दुर्घटनाग्रस्त हो गया। उसके सब यात्री मर गये।'

दूसरे दिन मैंने समाचार पत्रों में उस हवाई जहाज के अवशेषों तथा पास पड़े हुए यात्रियों के क्षत-विक्षत शवों का चित्र देखा तो मेरे मुख से अचानक निकल गया ''भाई जी ने मुझे यात्रा पर जाने से रोक कर मेरे प्राण बचा लिए।'' निश्चय ही भाई जी ईश्वरीय चमत्कारों से युक्त महान पुरुष हैं।

गोरक्षा आन्दोलन में योगदान

भाई जी धर्म प्राण भारत में गोहत्या के कलंक को प्रोत्साहन दिये जाने से बहुत दुःखित रहते थे। उन्होंने 'कल्याण' का 'गोअंक' प्रकाशित कर गाय तथा सम्पूर्ण गोवंश के महत्व को पूरे संसार के समक्ष प्रस्तुत किया था।

समय-समय पर देश में चलाये गये गोरक्षा आंदोलनों में भाई जी का सक्रिय सहयोग रहता था। सन् १९६६ में सर्वदलीय गोरक्षा अभियान समिति द्वारा चलाये गये गोरक्षा आंदोलन में तो उनकी अहम भूमिका ही थी। भाई जी ने 'कल्याण' में लिखा था-'जब तक धर्मप्राण भारत में, गोपाल श्री कृष्ण की पावन भूमि में गोमाता के रक्त की एक बूंद भी गिरती रहेगी-भारत कभी भी सुखी और समृद्ध नहीं हो सकता।'

भाई जी स्वयं स्वाधीनता सेनानी रहे थे। अतः उन्हें इस बात की बहुत पीड़ा होती थी, कि जिन मूल्यों की रक्षा या पुनर्स्थापना के लिये स्वाधीनता के लिये संघर्ष किया गया, आज उन्हीं की घोर अवहेलना की जा रही है। स्वाधीनता के बाद गौहत्या का कलंक जारी रहना, शराब को राजस्व प्राप्ति का साधन बना लेना, संस्कृत और हिन्दी की जगह विदेशी भाषा अंग्रेजी का वर्चस्व बना रहना, साहित्य के नाम पर अश्लील और फूहड़ विचारों का प्रचार उन्हें हमेशा खलता था।

श्री कृष्ण जन्मभूमि (मथुरा) के पुनरुद्धार कार्य में भाई जी का बहुत बड़ा योगदान था। श्री राम जन्मभूमि (अयोध्या) की मुक्ति के लिये भी उन्होंने बहुत प्रयास किये थे।

उनका स्पष्ट मत था कि जिस प्रकार हमने अंग्रेजों द्वारा स्थापित अनेक दासता चिन्हों से मुक्ति प्राप्त की, उसी प्रकार विदेशी हमलावरों द्वारा कब्जे में लिये गये हमारे आस्था केन्द्रों को मुक्ति दिलाई जानी चाहिये।

राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्र प्रसाद को 'गीता प्रेस' का साहित्य भेंट करते हुए भाईजी

श्री कृष्ण जन्मभूमि का उद्धार

ब्रज-यात्रा के समय मथुरा में श्री कृष्ण-जन्म स्थली पर खड़ी मस्जिद को देखकर तो वे रो पड़े थे। बाद में अग्रवाल वंश की महान विभूति सेठ जयदयाल डालमिया तथा अन्य सहयोगियों के साथ मिलकर उन्होंने श्री कृष्ण जन्म स्थली के उद्धार की योजना बनाई। अन्त में श्री कृष्ण जन्मभूमि पर भव्य 'भागवत् भवन' बनवाने का निर्णय किया गया। माघ शुक्ल १० सम्वत् २०२१ को भाई जी ने मथुरा में श्री कृष्ण जन्म स्थली पर 'भागवत भवन' का शिलान्यास किया। इस अवसर पर हजारों श्रद्धालुओं के बीच भाई जी ने प्रवचन करते हुए कहा था:-

''लगभग ३५०वर्ष पूर्व अत्याचारी औरङ्गजेब के द्वारा मन्दिर के ध्वंस किये जाने के बाद यही पहला अवसर है, जब इस पुण्य-भूमि में ब्रज के विद्वानों द्वारा श्रीमद्भागवत का मङ्गल-पारायण हो रहा है।.........................आज राष्ट्रीयता के नाम पर जातिवाद, भाषावाद और प्रान्तवाद चल रहे हैं। अधिकार का भूखा नेतृत्व बुरी तरह झगड़ रहा है एवं निरीह विद्यार्थी एवं जनता को भड़काकर उनके द्वारा देश को लजाने वाले उपद्रव यत्र-तत्र करवाये जा रहे हैं। हम एक ईश्वर को मानने वाले, एक ही भारत में रहने वाले एक-दूसरे पर घृणित प्रहार कर रहे हैं। यह हमारे लिये बड़ी ही अशोभनीय और दुर्भाग्य की बात है।.................आज हमारा देश स्वतन्त्र है, गणराज्य है। हिन्दू-मुसलमान का कोई